ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 92-94**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा सम्बन्धी विचार

डॉ0 सुनील कुमार मिश्र

प्राचार्य– सत्येन्द्र किशन कॉलेज ऑफ एजुकेशन, मिशिर मनियारी, सिलौत, मुजफ्फरपुर (बिहार) भारत

Received-08.04.2026, Revised-16.04.2026, Accepted-22.05.2026, E-mail:dr.sunilmishra012@gmail.com

सारांशः ***प्रत्येक चिन्तक का दर्शन चाहे वह संस्कृति को लेकर हो, धर्म सम्बन्धित हो, राजनीति से सम्बन्धित हो या अर्थशास्त्र से या फिर शिक्षा से, वह उसके अपने जीवन दर्शन पर आधारित होता है। अतः यह स्पष्ट है कि हर मूर्धन्य चिन्तक का अपना जीवन दर्शन होता है, जो विभिन्न क्षेत्रों में उसके द्वारा किये गये चिन्तन को प्रभावित करता है। स्वामी विवेकानन्द का भी अपने जीवन का एक दर्शन था। उनके विचार से जीवन में संघर्ष का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति को पग–पग पर संघर्ष करना पड़ता है। यदि संघर्ष में सफलता प्राप्त करनी है, तो व्यक्ति को तन–मन से बलवान होना चाहिए। स्वामी विवेकानन्द ऐसी शिक्षा प्रणाली को इस देश के लिए उपयुक्त समझते थे, जो व्यक्ति को जीवन में आने वाले संघर्ष के लिए तैयार करे, उसे इस योग्य बनाये कि वह चुनौतियों का डटकर मुकाबला कर सके। सच्ची शिक्षा वह है, जो व्यक्ति के चरित्र को उच्च बनाती है एवं राष्ट्रीयता, एकता और समाज सेवा की भावना का विकास करती है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि जो व्यक्ति को स्वावलम्बी बनाये, उसमें आत्म–विश्वास की भावना का विकास करे। स्वामी जी के अनुसार मात्र पुस्तकें पढ़कर परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाना शिक्षा नहीं है।*[1]

कुंजीभूत शब्द– चिन्तक दर्शन, संस्कृति, धर्म, जीवन दर्शन, पग–पग, तन–मन, राष्ट्रीयता, एकता, समाज सेवा, शिक्षा प्रणाली, बलवान।

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा को मात्र सूचना तक नहीं सीमित करना चाहिए। तमाम असमय जानकारियों को मस्तिष्क में ठूँस देने से कोई लाभ नहीं। सूचना का अपने में कोई महत्व नहीं है, जो विचार जीवन निर्माण में सहायक हो उनकी अनुभूति करना आवश्यक है। स्वामी जी के अनुसार केवल कुछ विचारों को रटकर डिग्री प्राप्त कर लेना शिक्षा नहीं है। विदेशी भाषा में कुछ रटकर अपने को शिक्षित समझने की भूल शिक्षा का जानकारी या सूचना तक सीमित रखने का परिणाम है। स्वामी जी के शब्दों में, ''यदि तुम केवल पाँच ही परखे हुए विचार आत्मसात् कर उनके अनुसार अपने जीवन और चरित्र का निर्माण कर लेते हो, तो तुम एक पुरे ग्रन्थालय को कण्ठस्थ करने वाले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हो। यदि शिक्षा का अर्थ जानकारी ही होता, तब तो पुस्तकालय संसार में सबसे बड़े सन्त हो जाते और विश्वकोष के महान ऋषि बन जाते।[2]

विवेकानन्द का मानना था कि बालक की आन्तरिक तथा वाह्य शक्तियों के विकास के लिए शिक्षा की विशेष अनिवार्यता है। शिक्षा उनकी इन्हीं शक्तियों का विकास है। व्यक्ति के अन्दर उपस्थित गुणों का विकास करना ही तो वास्तविक शिक्षा है। शिक्षा के उद्देश्य के विषय में उन्होंने कहा है कि–''शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए–मनुष्य में अंतर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति'' उनके ये शब्द आज भी शिक्षा–शास्त्रियों के लिए प्रेरणा स्रोत बने हैं। यह पूर्णता बाहर से नहीं आती है, बल्कि मनुष्य के भीतर ही छिपी रहती है। सभी तरह का ज्ञान मनुष्य की आत्मा में निहित रहता है।[3]

उस प्रच्छन्न ज्ञान को अनावृत करना है। बालक को अपने अन्दर निहित ज्ञान का अन्वेषण करना है। जब हम कहते हैं कि मनुष्य 'जानता' है तो इसका अर्थ है, वह खोजता है, प्रकट करता है। मन में ही सारा निहित है, बाहरी संसार सुझाव या प्रेरणा मात्र देता है, तब व्यक्ति अपने मन का ही अध्ययन करने के लिए ही प्रेरित होता है। न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण के नियम का आविष्कार किया। यह गुरुत्वाकर्षण का नियम न तो सेव में था, न पृथ्वी के किसी केन्द्रीय पद पदार्थ में। यह तो न्यूटन के मन में था, जिसे उसने अध्ययन करके प्रकट किया।

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा को व्यापक अर्थ में लिया है। वह शिक्षा को ज्ञान का पर्याय नहीं मानते वरन उस ज्ञानार्जन से शिक्षा का अर्थ लगाते हैं, जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में सहायक हो अर्थात जो व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, भावात्मक एवं आर्थिक विकास में योगदान प्रदान करे। एक वेदान्ति विचारक के रूप में वह मानव में पायी जाने वाली ईश्वरीय पूर्णता पर विश्वास करते हैं उन्होंने कहा ''शिक्षा– मनुष्य में पहले से ही उपस्थित पूर्णता की अभिव्यक्ति है।''

शिक्षा पाशुविक प्रवृतियों का शोधन करती है। यहाँ यह स्पष्ट रूप से जान लेना जरूरी है कि, शिक्षा मानव के अन्दर विचार एवं मनन–शक्ति को विकास करने में चिन्तन शक्ति नहीं होती। मानव समुदाय के अन्दर जो अनपढ़ हैं, उनमें मानव शक्ति का विकास नहीं हो पाता। परिणामस्वरूप वे मनुष्य के रूप में पशुवत् हो जाते हैं। इसके विपरित सही रूप में शिक्षित मानव मनन– शक्ति से सम्पन्न होता है, वह जीवन के कार्य क्षेत्र में पुरी बुद्धिमता से काम लेता है। इस तरह वास्तविक शिक्षा विचार–शक्ति तथा बुद्धि की जननी है। मन, आचरण और चरित्र में उत्तरोत्तर परिष्कार ही सर्वोतम शिक्षा का रूप हो सकता है। परिष्कृत मन, आचरण व चरित्र हो तो मानव का निर्माण करते हैं। शिक्षा मनुष्य के जीवन को ऊर्ध्वगामी बनाती है, निम्नगामी नहीं। अतः स्वामी जी के अनुसार सहृदय, सचरित्र निर्भीक, सक्षम तथा विवेकशील मानव के निर्माण प्रक्रिया को ही वास्तविक शिक्षा की संज्ञा दी जा सकती है।

शिक्षा के उद्देश्यों पर स्वामी विवेकानन्द का मानना है कि बालक को इसप्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए जिससे उनका चरित्र बने बुद्धि का विकास हो, मानसिक शक्ति बढ़े और वह अपने पैरो पर खड़ा हो सके। चरित्रहीन मानव में आत्मा नहीं होती, उसके अन्दर प्राण ही नहीं होते हैं। चरित्र व्यक्ति की आंतरिक शक्ति का परिचायक है। चरित्र से निर्भीकता, दृढ़ निश्चय व मानसिक शक्ति का विकास होता है। चरित्र ही मानव को वैयक्तिक विशिष्टता प्रदान करता है। अतः चरित्र निर्माण शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य है।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली का सबसे प्रमुख दोष यह है कि इसमें कल्पना शक्ति के विकास पर जोर नहीं दिया जाता है। छात्र विषय को समझने की अपेक्षा रटने पर अधिक जोर देते हैं। सच तो यह है कि कुछ विषय–खण्डों को रटकर परीक्षाओं में उत्तर लिखना तथा कागजी डिग्रियों को हासिल कर लेना मात्र ही आज शिक्षा का उद्देश्य रह गयी है। वस्तुतः शिक्षा का उद्देश्य तो मानव में महान विचार शक्ति का विकास करना है। विचार–शक्ति का वरदान ही मानव को पशु से उच्च स्थान प्रदान ही करता है। विचार–शक्ति के द्वारा ही मानव अच्छे–बुरे, ऊँच–नीच, सहयोग–असहयोग तथा न्याय–अन्याय में अंतर कर सकने में ही योग्य हो हो पाता है। कहना तो यह उचित होगा कि विचार का ही विस्तृत रूप ही बुद्धिमता है। रुढ़िवादी परंपराओं व संकुचित धारणाओं का नाश

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026

विचार–शक्ति से ही संभव है। अतः शिक्षा का विकसित उद्देश्य होना चाहिए– ''विचार तथा बुद्धि के बल पर ही व्यक्ति का समुचित विकास सम्भव है।[4]

शिक्षा का सबसे प्रबल उद्देश्य स्वस्थ्य एवं संवेदनशील मानव का विकास करना है। हकीकत में सबल, सक्षम, सुविकसित व प्रबुद्ध मानव का निर्माण ही तो शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होता है। स्वामी जी के कथनानुसार सारे प्रशिक्षणों का अन्तिम ध्येय मनुष्य का विकास करना है। जिस अभ्यास से मनुष्य की इच्छा शक्ति का प्रवाह और प्रकाश संयमित होकर फलदायी बन सके, उसी का नाम शिक्षा है। आज हमारे देश को जिस वास्तु की आवश्यकता है वह है, लोहे की माँसपेशियों और फौलाद के स्नायु, दुर्दमनीय प्रचण्ड इच्छा शक्ति, जो सृष्टि के गुप्त तथ्यों और रहस्यों को भेद सके और जिस उपाय से भी हो अपने उद्देश्य की पूर्ति करने में समर्थ हो, फिर चाहे उसके लिए समुद्र तल में ही क्यों न जाना पड़े–साक्षात् मृत्यु का ही सामना क्यों न करना पड़े। हम मनुष्य बनाने वाला धर्म चाहते हैं, हम सर्वत्र, सभी क्षेत्रों में मनुष्य बनाने वाली शिक्षा चाहते हैं।[5]

स्वामी विवेकानन्द का विचार था कि विद्यार्थी अनुकरण द्वारा अधिक सीखते हैं। अतः अध्यापक के व्यक्तिगत प्रभाव के बिना कोई शिक्षा सम्भव नहीं है। इसलिए वे गुरु गृह में गए सान्निध्य में शिक्षा देने की बात कहते हैं। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार– ''छात्र अपनी बाल्यावस्था से ऐसे गुरु के साथ रहें जिसका चरित्र जाज्वल्यमान हो और छात्रों के सामने उच्चतम त्याग का उदाहरण हों।'' स्वामी जी ने शिक्षक के तीन विशेष गुण बताये हैं। प्रथम गुण है उसका शास्त्र ज्ञान। अच्छा शिक्षक शास्त्रों के मर्म को जानता है, वह शब्दों के परे अर्थ को जानता है। दूसरा गुण है निष्पापता। उसे हृदय और मन से पवित्र होना चाहिए। चित की शुद्धता के बिना वह छात्रों में आध्यात्मिक शक्ति का संचार नहीं कर सकता। तीसरा गुण यह है कि शिक्षक को धन, नाम या यश सम्बन्धी स्वार्थ सिद्धि के लिए धर्म शिक्षा नहीं देनी चाहिए। अतः गुरु में त्यागभाष आवश्यक है[6] शिक्षक के स्थान पर प्रकाश डालते हुए स्वामी विवेकानन्द जी लिखते हैं– ''शिक्षक एक दार्शनिक, मित्र तथा पथ–प्रदर्शक है, जो बालक को अपने ढंग से अग्रसर होने के लिए सहायता प्रदान करता है।'' स्वामी जी ने शिष्य के लिए भी कुछ आवश्यक गुण बताये हैं। शिष्य में शुद्धता, विचार, वाणी और कर्म की पवित्रता होनी चाहिए। उसमें ज्ञान की पिपासा होनी चाहिए। जिज्ञासु ही वास्तविक शिष्य है। क्षेत्र में लगन के साथ परिश्रम करने की इच्छा व शवित होनी चाहिए। शिष्य में जिज्ञासा ही वह मूल्य चाह है जिससे वह ज्ञान प्राप्त करता है। हम वहीं पाते जो चाहते हैं। शिष्य के हृदय में उच्च आदर्शों के लिए व्याकुलता होनी चाहिए। अतः शिष्य के लिए आवश्यक है कि उसमें मन, वचन एवं आचरण की शुद्धता हो । शिक्षा की सफलता के लिए यह भी जरूरी है कि शिष्य में गुरु के प्रति दृढ़ विश्वास होना चाहिए। विनयशीलता व श्रद्धा के बिना छात्र की साधना कदापि सफल नहीं हो सकती। हाँ गुरुभक्ति जागरुक और उदबुद्ध होनी चाहिए अंधभक्ति नहीं, क्योंकि इससे शिष्य का विकास बाधित होता है। स्वामी विवेकानन्द यह भी कहते हैं कि वास्तव में कभी किसी व्यक्ति ने किसी दूसरे को नहीं सिखाया। हम में से प्रत्येक को, अपने आपको सिखाना होगा। बाहर के गुरु तो मात्र सुझाव या प्रेरणा देने वाले हैं, जो हमारे अन्तःस्थ गुरु को सब विषयों का मर्म समझने के लिए उद्धबोधित कर देते हैं।[7]

शिक्षा प्राप्त करने के उपाय या विधि के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि शैक्षिक उपलब्धियाँ एकाग्रता की मात्रा पर निर्भर है मन की एकाग्रता द्वारा हीं शिक्षण हो सकता है। चाहे विद्वान अध्यापक हो, चाहे मेधावी छात्र हो, चाहे अन्य कोई भी हो यदि वह किसी विषय को जानने की चेष्टा कर रहा है तो उसे एकाग्रता से ही काम लेन पड़ेगा।[8] एकाग्रता को प्राप्त करने के लिए आवश्यक, है ब्रह्मचर्य। ब्रह्मचर्य से बौ(िक एवं आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है। ब्रह्मचर्य से ही व्यक्ति में इच्छाओं और वासनाओं पर नियंत्रण करने की शक्ति प्राप्त होती है। ब्रह्मचर्य व्यक्ति में अनेक क्षमताएँ विकसित करता है। स्वामी विवेकानन्द का कहना था कि केवल पुस्तकों की अध्ययन करना ही शिक्षा नहीं है। पुस्तकों को पढ़ने से यदि एकाग्रता विकसित नहीं होती है, श्र(ा का विकाश नहीं होता है और छात्रों में आत्मविश्वास जाग्रत नहीं होता है तो उन्हें पढ़ाना व्यर्थ है।[9]

स्वामी विवेकानन्द एक संन्यासी थे और वेदान्त दर्शन से प्रभावित थे, इसलिए उनके शिक्षा सम्बन्धी विचारों में दर्शन, धर्म और संस्कृति का प्रभाव देखने को मिलता है। इस पृष्ठभूमि में स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को निम्न विन्दुओं द्वारा संक्षेप में समझा जा सकता हैः

1. छात्र सर्वांगीण विकास कर सकें ऐसी शिक्षा होनी चाहिए।
2. विद्यार्थी को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।
3. शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के विचार एवं आचरण में समन्वय होना चाहिए।
4. व्यक्ति में ज्ञान पहले से ही है। वह स्वयं ही सिखता है। केवल उपयुक्त वातावरण की आवश्यकता होती है।
5. आध्यात्मिकता और नैतिकता का विकास शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।
6. शिक्षक एवं शिष्य के बीच गहरा सम्बन्ध होना चाहिए तथा शिक्षक को शिष्य के साथ स्नेह पूर्ण और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करना चाहिए।
7. सभी प्रकार की शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का निर्माण ही होना चाहिए।

अन्त में स्वामी विवेकानन्द का यह कथन द्रष्टव्य है, जिसमें वो शिक्षा के द्वारा ऐसे मनुष्य का निर्माण चाहते हैं जिसका विकास समन्वित रूप से हुआ हो। उन्हीं के शब्दों मै ''हृदय से विशाल, मन से उच्च और कर्म में महान्। हम ऐसा मनुष्य चाहते हैं जिसका हृदय संसार के दुख–दर्दों को गम्भीरता से अनुभव करें और हम ऐसा मनुष्य चाहते जो न केवल अनुभव कर सकता हो, वरन वस्तुओं के अर्थ का भी पता लगा सके, जो प्रकृति और बुद्धि के हृदय की गहराई में पहुँचता हो। हम ऐसा मनुष्य चाहते हैं जो यहाँ भी न रुके वरन जो भाव और वास्तविक कार्यों के द्वारा अर्थ का पता लगाना चाहे। हम मस्तिष्क हृदय और हाथों का ऐसा ही सम्मिलन चाहते हैं।[10]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शिक्षा दर्शन, डॉ0 सावित्री माथुर, आस्था प्रकाशन, जयपुर; पृ0 सं0– 159.
2. स्वामी विवेकानन्द – 'शिक्षा'; हिन्दी अनुवादद्ध श्री रामकृष्ण आश्रम, पृष्ठ सं0– 51.
3. महान शिक्षा शास्त्री, राहुल गुप्ता, प्रेरणा प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं0– 136.
4. महान शिक्षा शास्त्री, राहुल गुप्ता, प्रेरणा प्रकाशन, दिल्ली, पृ0 सं0– 139.
5. शिक्षा दर्शन, डॉ0 सावित्री माथुर, आस्था प्रकाशन, जयपुर, पृ0 सं0– 162.

6. शिक्षा के दार्शनिक आधार, डॉ0 रामशकल पाणेय, डॉ0. बीना कपूर, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2, पृ0 सं0– 162.
7. वेदान्त शिक्षा–दर्शन, डॉ0 आर0 पी0 पाठक, डॉ0 अमिता पाण्डेय भारद्वाज, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, पृ0 सं0– 112.
8. स्वामी विवेकानन्द– शिक्षा; हिन्दी अनुवाद, श्री रामकृष्ण आश्रम नागपुर, पृष्ठ सं0– 14.
9. शिक्षा के दार्शनिक आधार डॉ0 रामशकल पाण्डेय, डॉ0 बीना कपूर, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2, पृ0 सं0– 161.
10. व्यक्तित्व का विकास – स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृ0 सं0– 01.

*****